पार्श्वनाथ के प्रति भक्ति का प्रतीक यह मन्दिर कला प्रेमीयों का तीर्थ है। सूर्यदेव का मन्दिर एक अलग पहाड़ी पर है। इस का निर्माण कब और कैसे हुआ ? इस का पता नहीं चलता ? इसके निर्माता के उल्लेख भी नहीं मिलता।

राणकपूर के मन्दिर पाषाण की मूर्त कल्पना है। इतिहास, कला व प्राकृतिक परिवेश इस स्थान को भारतीय पर्यटन एवं आराधना स्थलों का सिरमौर साबित करते हैं। अमेरिका के विश्व मान्य विद्वान लुइ जुहान के अनुसार स्थापत्य कला एवं आध्यात्मिकता की यह आश्चर्यजनक अभिव्यक्ति है।

राणकपूर में एक छोटी सी मार्किट मन्दिर के बाहर है जहां दैनिक उपयोगिता की हर वस्तु मिल जाती है। यह मन्दिर का प्रबंध आनंद जी कल्याण जी पेढ़ी के आधीन है। इसी पेढ़ी के आधीन धर्मशाला बनी हुई है। जहां यात्रीयों के रहने का सुन्दर प्रबंध है। पूजा करने वालों के लिए पूजा सामग्री हर समय उपलब्ध होती है। भोजनशाला व रहने का उत्तम प्रबंध है। यह मन्दिर में एक ,खम्भा टेडा है। इस पर कलाकारी भी नहीं हुई।

एक बार प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी राणकपूर के मन्दिर देखने आई। वह मन्दिर को देख कर अत्यधिक प्रभावित हुई। उन्होंने टेढ़ा स्तम्भ देखा। उन्होंने यहां के प्रबन्धकों को कहा "यह स्तम्भ टेढ़ा क्यों है ? अगर आप कहें तो मैं फ्रांस के इंजिनीयरों को बुला कर इसे सीधा करवा दूंगी।"

प्रबंधकों ने वहां काम कर रहे शिल्पीयों से इस के बारे में विमर्श किया। शिल्पीयों ने कहा "यह स्तम्भ हमारे बुजुर्गों ने जान कर टेढ़ा स्थापित किया है। इस का कारण यह है कि वह चाहते थे कि शिल्प कला के इस केन्द्र को

किसी की नजर ना लगे। इसी कारण उन्होंने यह टेढ़ा स्तम्भ लगाया है। इसे उखाडने की जरूरत नहीं है।"

शिल्पीयों के उत्तर से श्रीमती इन्दिरा गांधी अत्यधिक प्रभावित हुई। उन्होंने शिल्पीयों की श्रद्धा व भक्ति की मुक्त कण्ट से प्रशंसा की। इस प्रकार राणकपूर मन्दिर का कण कण नैसर्गिक सौंदर्य से भरा पडा है। यह मन्दिर सत्यं-शिवमं-सुन्दरं का जीता जागता प्रतीक है। संगमरमर से बना यह मन्दिर धरती पर प्रभु भक्तों का तीर्थ है। देशी विदेशी पर्यटकों के लिए पर्यटन स्थल है। यहां तीर्थ के मन्दिरों फोटो लेना वर्जित है। यहां हर रोज यात्रीयों व श्रद्धालुओं का तांता लगा रहता है। अभी अभी कांग्रेस अध्यक्षा श्रीमती सोनिया गांधी नें इस मन्दिर की यात्रा की। वह भी इस की कला से बहुत प्रभावित हुई।

## हमारी राणकपूर यात्रा

हम नाथ द्वारा से चले थे। रास्ते में कई स्थलों को देखते हमें शाम हो चली थी। थकावट बहुत ज्यादा थी। भयंकर गर्मी पड़ रही थी। मन्दिर को देख कर सारी गर्मी भूल चुके थे। हम ने धर्मशाला में सामान टिकाया। फिर स्नान कर खाना खाया। शाम की भव्य आरती में शमिल हुए। यहां राजस्थानी व गुजराती भक्तों की भरमार थी। पंजाबी तो हम दो ही थे। व्यवस्थापकों का प्रबंध सुन्दर था। यह सुन्दर व्यवस्था भी लोगों को अपनी ओर आकर्षित करती है। रात्रि को राजस्थानी, गुजराती वेशभूषा में लोग घूम रहे थे। यहां अथाह शान्ति मिलती है। मन्दिर में प्रवेश करते एक अलौकिक अनुभव घटित होता है। ५० साल तक इस भव्य निर्माण, इस पर लगा करोडों का द्रव्य प्रभु ऋषभदेव के प्रति सेठ धरणीशाह के समर्पण व श्रद्धा का प्रतीक है। राजस्थान के

इस तीर्थ स्थल की रात्रि भी अनुपम थी। लगता था कि आकाश से कोई देव विमान धरती पर अभी अभी उतरा है। हम आरती में भाग लेने के पश्चात मन्दिरों की यात्रा पर निकल पड़े। मन्दिर सभी इसी एक खण्ड में स्थित हैं। अरावली की सुन्दर पहाड़ी, नाग की तरह वलखाती सड़कें यात्रीयों का ध्यान वरवस खींच लेती हैं।

रात्रि को अपने कमरे में विश्राम के लिए पहुंचे। शांत वातावरण में काई ध्यान योगीयों के लिए यह अच्छा स्थल है। आधी रात के वाद हम सो गए। सुवह ४ वजे उठे।

फिर मन्दिर के दर्शन किए। एक पूजा की वोली मैंने ली। एक भाई ने विधिवत् पूजा करवाई। फिर राजस्थान के इस शहर में इस मन्दिर व वाकी मन्दिरों का अवलोकन किया। राजस्थान की लम्बी यात्रा ने मुझे कई अनुभव प्रदान किए हैं। राजस्थान जैन इतिहास, कला, संस्कृति व साहित्य की अमूल्य धरोहर है। राजस्थान भारत का वह भाग है जहां हर शहर में किला है, किले में जैन मन्दिर है। राजस्थान के इन भागों में जैन साहित्य को पर्याप्त सुरक्षण मिला है।

राजस्थान के इस भाग में सेठ भामा शाह, विमलशाह, व धरणीशाह को इस मरूधरा ने जन्म दिया है। हम राणकपूर के मन्दिरों को श्रद्धा से शीश झुका कर वापिस आ रहे थे। हमारे मन में जहां प्रभु भक्ति का उफान चल रहा था वहीं धरणीशाह सेठ की भारतीय संस्कृति को अनमोल देन को भुला पाना मुश्किल है था। वैसे एक स्वप्न साकार होता है, इस स्वप्न को पूरा करने का श्रेय शिल्पी दीपा को जाता है। इस मन्दिर की प्रतिष्ठा करने वाले आचार्य सोमप्रभव सूरि जी महाराज महान रहे थे। जिन्होंने अपनी सशक्त प्रेरणा देकर इस भवन जिन मन्दिर का निर्माण कराया। सेठ, शिल्पी व धर्म गुरू तीनों की भक्ति

रूपी त्रिवेणी इस मन्दिर के कण कण में प्रकट होती है। देव, गुरु व धर्म की त्रिवेणी इस मन्दिर के भक्तों के हृदय पटल से प्रफूटित हो कर सम्यकत्व रूपी समुंद्र को जन्म देती है। यह तीर्थ यात्रा हमारी अर्हत प्रभु के प्रति सहज समर्पण व अपने धर्म भ्राता की इच्छा को परिपूर्ण करती है।

## मुच्छैला श्री महावीर जी :

राणकपूर में हम ने दोपहर का खाना खाया। पुनः सभी मन्दिरों में पूजा अर्चना वन्दन किया। फिर राणकपूर तीर्थ को वन्दन नमस्कार किया। वापिस अपनी जीप में सवार हुए। यह भी महज इतफाक था कि हम यहां पहुंचे तब भी भयंकर गर्मी में थे। वापसी सफर भी इसी गर्मी में कर रहे थे। कुछ किलोमीटर चलने के पश्चात हम एक नाले के उपर से गुजर रहे थे यह बरसाती नाला है। इस नाले के एक ओर सड़क जाती थी। उस सड़क पर एक साईन बोर्ड लगा था। "तीर्थ राज श्री मुच्छैला महावीर जी"

इस बोर्ड को पढ़ा। मन मे उत्सुकता जागी। ड्राईवर के इस स्थान के बारे मे पूछा। ड्राईवर ने उत्तर दिया "साहिब ! यह तीर्थ प्रसिद्ध चमत्कारिक तीर्थ है। मन्दिर चाहे छोटा है पर प्राचीन है। यह तीर्थ की यात्रा भी आपको करनी चाहिए।"

मैने अपने धर्म भ्राता रविन्द्र जैन से इस यात्रा के बारे मे विमर्श किया। उसने मेरी बात में हामी भरी। करीब ५ किलोमीटर चलने पर हम एक गांव में पहुंचे। इस गांव में एक भव्य प्राचीन मन्दिर के दर्शन हुए। हम मन्दिर में पहुंचे। गांव होने के कारण यहां यात्री तो आते हैं, पर ठहरते कम हैं। हम इस मन्दिर में पहुंचे। मन्दिर के मुख्य पुजारी को इस मन्दिर के इतिहास के बारे में पूछा। पुजारी ने कहा "यह

मन्दिर भगवान महावीर के समय का है। इस बात की पुष्टि इस मन्दिर के पास खण्डित मन्दिर के खण्डहर व प्राचीन प्रतिमाओं से होती है। वर्तमान मन्दिर राणकपूर जैसे शिल्प पर आधारित छोटा सा मन्दिर है। इस में प्रभु महावीर की भव्य प्रतिमा है। मैने पूछा "इस मन्दिर का नाम मुच्छैला महावीर कैसे पडा ? न तो महावीर के मूंछें थीं। फिर क्या कारण है कि इसे मुच्छैला महावीर कहते हैं ?"

पुजारी ने मेरी जिज्ञासा शांत करते हुए कहा "यह क्षेत्र भी राणा कुंभा के क्षेत्र में पड़ता था। यह मन्दिर तब अपनी परम उतकृष्ट सीमा पर था। यहां साहुकारों की भव्य बस्ती थी। यहां का राजा राणा कुम्भ प्रभु महावीर का भक्त था। उसने प्रभु महावीर की इस प्रतिमा की पूर्ण सेवा भक्ति का व्रत ले रखा था। वह हर रोज मन्दिर में प्रभु महावीर की पूजा भक्ति करता था। एक दिन वह मन्दिर में पुजा के लिए न आ सका। पुजारी ने प्रभु का पवित्र गंधोधक ले कर राज दरबार में आए। पूजारी की आंखों की दृष्टि कमजोर थी। उनकी मुंछों का एक बाल उस गंधोधक में गिर पड़ा। पुजारी बाल गिरने को देख न सका।

पुजारी जी ने अपना लाया गंधोधक राजा को दिया। राजा ने गंधोधक में जब बाल देखा तो राजा कुम्भा को हैरानी हुई। राजा ने पुजारी को व्यंग करते हुए कहा "पुजारी जी क्या बात है प्रभु की प्रतिमा के क्या मूंछें उग आई हैं, जो गंधोधक में बाल आ रहे हैं ?"

बात साधारण थी। पर राजा की बात सुन कर पुजारी को गहरा आघात पहुंचा। पुजारी आखिर पुजारी था। वह अपने प्रभु का अपमान कैसे सहन कर सकता था ? वह मन्दिर में वापिस लौटा। आकर उस ने प्रभु के समक्ष गुप्त अभिग्रह गुप्त प्रतिज्ञा धारण कर लिया। वह अभिग्रह था कि

जब तक प्रभु की प्रतिमा के मूंछें न प्रगट हों, तब तक अन्न जल का त्याग करता हूं। इस विचित्र गुप्त अभिग्रह को पुजारी के इलावा कोई नहीं जानता था। कई दिन यह अभिगृह चलता रहा। पुजारी का अभिगृह पूरा करने के लिए राजा व श्रावकों ने भरसक प्रयत्न किए पर अभिगृह पूरा नहीं हो रहा था। पुजारी जी की शरीरिक स्थित बिगडती जा रही थी।

भक्त की लाज उस का भगवान है। यह ऐसा रिश्ता है जो सहज समर्पण का रिश्ता है। इस रिश्ते में कुछ भी घटित हो सकता है। ऐसा ही चमत्कार पुजारी के साथ हुआ। हुआ यूं, एक दिन राजा राणा कुम्भा प्रभु महावीर की इस प्रतिमा के दर्शन करने आए। उन्होंने जब प्रभु महावीर की प्रतिमा के दर्शन किए तो उन्हें प्रभु महावीर की प्रतिमा के उपर दाड़ी-मूंछें अंकित हुई नजर आई। राणा को अपनी भूल का एहसास हुआ। राणा ने पुजारी जी से कहा "महाराज आप की पूजा करते भक्ति साकार हो गई है। मैंने आज प्रभु महावीर की पूजा करते उनके दाड़ी-मूंछें देखी हैं। आप को मेरे मजाक के कारण जो आघात पहुंचा है उसके लिए आप मुझे क्षमा करें। मैंने प्रभु महावीर की इस प्रतिमा का स्पष्ट चमत्कार देख लिया है। आप की भक्ति की शक्ति को मैं नमस्कार करता हूं। इस भक्ति के कारण इस प्रतिमा का अतिशय देखने का मूझे अवसर मिला है। आप प्रभु महावीर की भक्ति में डूबे सच्चे भक्त हैं। हम आप पहचान नहीं सके। मेरा व्यंगय कटु था। जिस के कारण आप की आत्मा को आघात कष्ट पहुंचा। इस का जो प्राश्चित आप देवें, मैं ग्रहण करता हूं।"

राजा राणा कुम्भा ने पुजारी से क्षमा मांगी। पुजारी ने कहा "राजन ! आप ज्यादा कष्ट अनुभव न करें।

आप तो प्रभु भक्त हैं। मैं भी प्रभु का साधारण भक्त हूं। प्रभु प्रतिमा का एक भक्त द्वारा अपमान एक भक्त कैसे सहन कर सकता था ? इसी कारण मैंने यह अभिग्रह किया। आप के कारण मेरा यह गुप्त अभिगृह फलित हुआ। इस तीर्थ की व जैन धर्म की प्रभावना हुई। आप तो नमित्त मात्र हैं। यह घटना तो होनी थी सो हो गई। आप व्यर्थ चिंता मत करें। आप के कारण मेरी भक्ति सफल हुई।"

इस प्रकार मुच्छैला तीर्थ और इसकी प्रतिमा के चमत्कार संसार में पहुंचे। अब संसार के कोने कोने से इस चमत्कारी प्रतिमा के दर्शन करने भक्तजन आते हैं। इस प्रकार पुजारी ने हमें इस तीर्थ का संक्षिप्त इतिहास सुनाया।

जैसे पहले कहा गया है कि यह मन्दिर राणकपूर मन्दिर से आकार में छोटा जरूर है पर भीतरी कला दृष्टि से राणकपुर मन्दिर का प्रभाव इस गर्भ गृह व प्रवेश द्वार में देखा जा सकता है। इस मन्दिर की छत भी जैन शिल्प का उत्कृष्ट नमूना है। इस मन्दिर की छत के उपर भी १६ विद्यादेवीयां अलंकृत हैं। प्रभु महावीर की भव्य प्रतिमा भी कलात्मक है। मन्दिर के बाहर निकलते ही कुछ खण्डीत प्राचीन प्रतिमाएं मन्दिर परिसर में रखी हुई हैं। लगता है पहले इस स्थान पर कोई भव्य मन्दिर रहा होगा जिस की समस्त प्रतिमाएं हैं व मन्दिर किसी कारण विध्वंस का शिकार हो गए। मन्दिर की यात्रा चरम सुख देने वाली है।

मन्दिर व गांव प्रदूषण मुक्त, शान्त स्थान पर है। गांव छोटा है यहां के ग्रामीण प्रभु महावीर की श्रद्धा से पूजा अर्चना करते है। छोटी सी धर्मशाला में पर्याप्त संख्या में यात्री यात्रा करते रहते हैं। भोजनशाला में हर समय यात्रीयों को भोजन उपलब्ध होता है। इस मन्दिर व धर्मशाला की देखभाल भी एक पेढ़ी करती है।

हम मुच्छैला महावीर तीर्थ की यात्रा सम्पन्न कर वापिस सड़क पर आए। कुछ किलोमीटर चलने पर गोमती का चोराहा आया। हम ने जीप नाथ द्वारा से ली थी और वापस भी वहां तक थी। पर किसी की सलाह पर हम गोमती के चोराहे पर ही उतर गए। यहां से हमें जयपूर के लिए सीधी वस मिलती थी। सो हम वहां रूक कर वस का इंतजार करने लगे।

कुछ ही समय वाद एक वस द्वारा हम जयपूर पहुंचे। तव रात्रि पूरी व्यतीत हो चुकी थी। यह यात्रा पूरी रात्रि की थी। हम जयपूर सुवह ४ वजे पहुंचे। जयपूर से देहली दिन में पहुंच गए। रास्ते में हम ने अलवर देखा, यहां प्राचीन महल, किले प्रसिद्ध हैं। पत्थर का व्यापार मूर्ति कला का यहां काफी कार्य होता है।

दिल्ली में कुछ समय रूक कर स्नान किया। फिर देहली से वस पकड़ कर वापिस मण्डी गोविन्दगढ़ आ गए। शाम हो चुकी थी। मेरे धर्म भ्राता रविन्द्र जैन भी मालेरकोटला चले गए। यह यात्रा हमारे लिए जैन इतिहास, कला व साहित्य के प्रति जागृति पैदा करने वाली थी। इस यात्रा ने हमें तीर्थंकरों की परम्परा के प्रति श्रद्धा को नया आयाम व वल दिया। यह हमारी संयुक्त यात्राएं थीं। अगले प्रकरण में अपनी उन यात्राओं का वर्णन करूंगा जो मैंने अपने परिवार व रिश्तेदारों के साथ सम्पन्न की।

## प्रकरण १५

## मेरी तृतीय तीर्थ यात्रा

# अहमदाबाद इतिहास दर्शन

जैसे मैंने पिछले प्रकरण में उल्लेख किया था कि मैं कुछ यात्राएं अपने धर्म भ्राता श्री रविन्द्र जैन के साथ की थी कुछ उल्लेखनीय यात्राएं मैंने सपरिवार की थी। इन यात्राओं के कारण मुझे धर्म में सम्यक्त्व प्रदान करने वाले मुनि श्री जयचन्द जी महाराज के दर्शन का लाभ मिला था। उनका चतुर्मास अहमदाबाद में था। इस अहमदाबाद का प्राचीन नाम कर्णावती था। यह दिल्ली से ८८६ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। गयारहवीं सदी में श्री कर्णदेव ने इस नगरी की स्थापना की थी। पहले इस का नाम आशपल्ली था। यह नगर वैभव सम्पन्न था। इस नगर ने बहुत उतार चढाव देखे हैं। मुसलमानों ने इसे अहमदाबाद नाम दिया। यह नगर भारत का विशाल जैन जनसंख्या वाला नगर है। यहां २२५ जिन मन्दिर हैं। यह नगर जैन धर्म का प्रमुख केन्द है।यहां का सब से प्राचीन जैन मन्दिर चेहरी वाड है। यह मन्दिर प्रभु संभवनाथ को समर्पित है। यह ११ हस्तलिखित भण्डार हैं। अनेक धर्मशालाएं, पकाशन संस्थाएं इस नगर की शान हैं। हस्तलिखत भण्डार में हजारों वर्ष प्राचीन ग्रंथ का संकलन है। अनेकों शोध संस्थाएं इस नगर ने जैन धर्म को दी हैं।

अहमदाबाद का प्रमुख आकर्षण दिल्ली दरवाजे के बाहर सेठ हठी सिंह की वाडी मन्दिर प्रमुख तीर्थ स्थान है। यह भव्य मन्दिर सेठ हठी सिंह ने बनवाया था। यहां के भण्डारों में अनेकों हस्तलिखत ग्रंथों का विपुल संग्रह है।

भारत के श्वेताम्बर समाज का प्रमुख संगठन आनदंजी कल्याण जी पेढ़ी का मुख्यालय है। यह पेढ़ी प्रमुख जैन तीर्थों की व्यवस्था करती है। नए मन्दिरों का निर्माणा, पुराने मंदिरों का जीर्णोद्धार इ स पेढ़ी का प्रमुख कर्तव्य है। संसार भर में इस पेढ़ी ने अनेकों मंदिरों के निर्माण में सहयोग दिया है। यह पेढी सन् १८८० में रजिस्टर्ड हुई थी। इसी पेढ़ी ने समेद शिखर तीर्थ खरीद कर श्वेताम्बर समाज को अर्पित किया है। अहमदाबाद में लालभाई दलपत भाई भारतीय संस्कृति विद्या मन्दिर है। यह जैन शोध संस्थान है जहां पर हजारों ग्रंथ, प्राचीन चित्र, मुर्तियां व प्राचीन सामग्री का संग्रह है। यह शहर जैनों का प्रमुख केन्द्र होने के कारण यहां हर सम्प्रदायों के साधु साध्वीयों का विचरण रहता है।

यहां का प्रमुख आकर्षण हठी सिंह का जैन मन्दिर है यह मन्दिर कलात्मक है। इसकी भव्यता देखकर शत्रुंजय के मन्दिरों का ध्यान आंखों के सामने आ जाता है। यहां हिन्दी गुजराती, अंग्रेजी के अनेकों जैन पत्रिकाएं निकलती हैं। कई शोध पत्रिकाएं भी निकलती हैं। सरस्वती पुस्तक भण्डार में जैन धर्म के हर विषय पर हर ग्रंथ उपलब्ध हैं।

अहमदाबाद जैन मन्दिरों के ईलावा व्यापार का प्रमुख केन्द्र है। यहां का प्रमुख व्यापार कपड़े की मिलें हैं। यहां बड़ी मार्किट है। जहां भारत वर्ष के कपड़े के व्यापारीयों की दुकानें हैं। व्यापार का केन्द्र होने के कारण धर्मशाला, होटल काफी हैं। यहां पर भद्रफोर्ट, सैयद सिदी जाला, गीता मन्दिर, कांकेदिया झील, बाल वाटिका, व झूलती मीनारें दर्शनीय हैं और पर्यटन की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

सेठ हठी सिंह के मन्दिर में मूल नायक प्रभु धर्म नाथ सुशोभित हैं। यहां अनेकों स्थानक, उपाश्रय हैं। वैसे तो गुजरात में गृह चैत्यालय प्रचूर मात्रा में है गुजरात में जैन

धर्म का आगमन प्रभु महावीर के ५०० साल बाद आगमन हो गया था। आचार्य भद्रबाहु के समय जैन संघ दो भागों में विभक्त हो गया था। एक राजस्थान, महाराष्ट्र व गुजरात में फैल गया। यह सम्प्रदाय श्वेताम्बर कहलाया। दिगम्बर सम्प्रदाय कर्नाटक, तामिलनाडू व मध्य प्रदेश में फैला। गुजरात का इतिहास दरअसल जैन इतिहास है। कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य हेमचन्द सूरि जी महाराज, दादा जिन दत्त व आचार्य यशोविजय के नाम प्रसिद्ध हैं। यहां आचार्य हेमचन्द की प्रेरणा से परमार्हत राजा कुमारपाल को जैन धर्म में दीक्षित करके जैन धर्म का प्रचार करवाया और उसे राज्य धर्म का दर्जा दिलाया।

अहमदाबाद से ८ किलोमीटर की दूरी पर सरखेज गांव में प्रभु वासुपूज्य का मन्दिर है। यहां पर श्री पद्मावती माता श्री चक्रेश्वरी देवी की प्रतिमाएं भव्य रूप में स्थापित हैं। यह तीर्थ दर्शनीय व चमत्कारी है। गुजरात में वस्तुपाल, तेजपाल जैसे मंत्री ने जैन कला को प्रोत्साहित किया।

अहमदाबाद में जैनों के अतिरिक्त हिन्दु व मुसलमानों का धर्म स्थान विपूल मात्रा में है। यहां ही जनसंख्या वैष्णव है। गुजरात ने अपनी कला संस्कृति को जीवंत रखा है। जैन इतिहास का काफी वर्णन गुजरात से संबंधित है। यहां अमूर्ति पूजक सम्प्रदाय के संस्थापक लोंकाशाह हुए। ऋषि सम्प्रदाय के प्रथम ऋषि लव जी भी सूरत के निवासी थे। इस तरह अनेकों इतिहासक घटनाओं का केन्द्र यह गुजरात है। इस सदी का महान दार्शनिक श्री रायचन्द भी गुजरात के थे जिन्होंने स्वय प्रमाणिक जीवन जीया। उनके प्रभाव से मोहनदास कर्मचन्द गांधी का जीवन बदल गया। भारतीय राजनीति के अनेकों नक्षत्रों को गुजरात ने जन्म दिया है। आज भी यहां ड्राई स्टेट है। गुजरात भारत

का पहला राज्य है जहां शराववंदी मजबूती से लागू है। यहां अंतराष्ट्रीय व्यापार का केन्द्र है इस के लोहा व दवाई उद्योग प्रसिद्ध है।

गुजरात में शिक्षा के साथ साथ अपने संस्कार जिंदा हैं। यहां के स्थानीय लोग धार्मिक प्रवृति के हैं। अपने धन का अधिकांश हिस्सा तीर्थ मन्दिरों को समर्पित करते हैं। हर सुवह मन्दिरों में श्रावक श्राविकाएं अर्चना पूजा के लिए इकट्ठे होते हैं। इन लोगों पर आधुनिकता व पश्चिम का कोई असर नहीं। आज भी हिन्दी के वाद गुजराती भाषा में जैन धर्म का साहित्य मिलता है। प्राचीन समय में गुजरात के एक सुरक्षित क्षेत्र था जहां कला व संस्कृति का विकास हुआ। श्वेताम्बर के हजारों मुनि व साध्वीयों का संबंध गुजरात से है।

## अहमदाबाद की ओर प्रस्थान :

मेरा अहमदावाद का भ्रमण का कारण मुनि श्री जयचन्द्र जी महाराज के दर्शन थे। वह मुनि के दर्शन लम्वे अंतराल के वाद होने थे। पूज्य गुरूवर के अनेक समाचार प्राप्त हुए पर जाने का कोई कारण नहीं वन रहा था। यह प्रोग्राम में मेरे साथ मेरे वच्चे, मेरी वहिन उर्मिला व उनके वच्चे भी थे। मेरी वहिन जैन धर्म के प्रति पूर्ण श्रद्धावान है। हमें गुरूधारणा सपरिवार इन्हीं मुनि राज की कृपा से हुई थी। यह हमें जैन धर्म के संस्कार प्रदान करने वाले महात्मा थे। दरअसल इन मुनिवों के साथ हमारे धर्मिक रिश्ता तो था साथ में यह मुनि राज हमारे परिवार के दिशा निर्देशक भी रहे हैं।

सर्व प्रधम में सपरिवार गोविन्दगढ़ से अम्वाला छावनी पहुंचा। फिर मैंने वहां से सर्वोदय एक्सप्रेस पकड़ी।

दिल्ली से साबरमती एक्सप्रैस पकड़ कर अगले दिन ३ बजे अहमदाबाद पहुंचे। ट्रेन का सफर बच्चों की दृष्टि से सुविधाजनक होता है। वैसे भी इतना लम्बा बस का सफर हमारे लिए कठिन था। हम दोपहर के पश्चात अमहदाबाद में लाल बाग स्थित मुनि श्री जय चन्द्र के प्रवास स्थल पर पहुंचे। कुछ समय के दर्शन करने के पश्चात् हमारी ठहरने की व्यवस्था एक अच्छे परिवार में कर दी गई। मुझे गोविन्दगढ़ से चलते समय मेरे धर्म भ्राता श्री रविन्द्र जैन ने कहा था कि अगर समय मिले तो पालीताना की यात्रा भी कर लेना। मैंने अपने धर्मभ्राता को उत्तर दिया "अगर प्रभु ऋषभदेव ने बुलाया तो मैं रूकने वाला कौन होता हूं।"

यह बात महज इत्फाक थी। मैंने इतनी लम्बी यात्रा की आज्ञा घर वालों से प्राप्त नहीं की थी। पर यह बुलावा तो आदिश्वर दादा का था। शत्रुंजय तीर्थ के दर्शन को तीन लोक के देवता तडपते हैं। फिर मेरी क्या औकात है ? मैं तो प्रभु का साधारण भक्त हूं। उसका दास हूं। मेरा सौभाग्य है कि मुझे वीतराग परमात्मा, पांच महाव्रती गुरू, सर्वज्ञ परमात्मा का धर्म प्राप्त हुआ है। उसकी मौज में मेरी मौज है। अहमदाबाद पहुंचा कर, वहां मैंने सर्वप्रथम अपने गुरू श्री जय चन्द जी को अपना पंजाबी साहित्य समर्पित किया। उन्होंने मुझ से मेरे धर्मभ्राता रविन्द्र जैन की कुशलता पूछी। मैंने सारी गतिविधियों से उन्हें अवगत कराया। उन्होंने पंजाबी साहित्य की प्रेरिका साध्वी श्री स्वर्णकांता जी महाराज के कार्यों का अनुमोदन किया। फिर मैंने दो दिन रूक कर अहमदाबाद के दर्शनीय स्थल देखे। इन में प्रमुख हठी सिंह का जैन मन्दिर, उसकी कला मेरे लिए अवर्णनीय हैं।

अहमदाबाद देखा जाए तो धनवानों का शहर है। सम्पन्ता व सादगी गुजराती शैली का महत्वपूर्ण अंग है। जैन

धर्म में सहधर्मी की सेवा इतनी महान मानी गई है कि यह तीर्थंकर नाम कर्म गोत्र का कारण मानी गई है। इस सहधर्मी भावना के कारण सभी जैन एक दूसरे का ध्यान रखते हैं। यह विशेषता जैन धर्म में पाई जाती है।

मैंने जहां अहमदाबाद की यात्रा की थी। वहां मैंने उन लोगों से आस पास के पर्यटन स्थलों पर जाने का कार्यक्रम बनाना था। जो जैन गुजरात आए, वह पालिताना सिद्ध क्षेत्र की यात्रा न करे, यह असंभव है। वैसे भी गुजरात, राजस्थान में जैन धर्म की जड़ें इतनी गहरी हैं कि वर्तमान सभ्यता इसे प्रभावित नहीं कर सकी। मैंने श्री जय चन्द्र जी महाराज से गुजरात के प्रसिद्ध स्थलों की जानकारी प्राप्त करनी थी। उन्होंने मुझे जानकारी ही उपलब्ध नहीं करवाई बल्कि मार्ग दर्शन भी किया। मेरी आगामी तीर्थ यात्रा का कार्यक्रम बना दिया।

मैंने दो दिन अहमदाबाद प्रवास किया। कला, धर्म, साहित्य का त्रिवेणी संगम यहां पर कण कण देखने को मिला। गुजरात के जैन हिन्दु, सिक्ख धर्म के इलावा ईसाई मुस्लिम व पारसी व्यापक संख्या में रहते हैं। सारे अपनी भाषा कला व संस्कृति को गुजरात की दृष्टि से देखते हैं। अहमदाबाद में जैन साहित्य हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, गुजराती व अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित होता है। अहमदाबाद में जैन साहित्य के अतिरिक्त दूसरे धर्मों का साहित्य गुजराती व अंग्रेजी में मिल जाता है।

इस प्रकार अहमदाबाद प्रवास का समय ठीक ढंग से गुजरा। गुजरात की संस्कृति की अहमदाबाद में देखने को मिल जाती है। गुजरात में सब से ज्यादा प्रेम यह लोग अपनी भाषा व संस्कृति से करते हैं। सभी भाषाओं के ग्रंथों का लिपियांतर भी गुजराती में मिल जाता है। जैसे कल्पसूत्र

के अनेकों रूप मिलते हैं। गुजरात में जैन मन्दिरों के लिए पूजा उपयोगी वस्तुएं बनती हैं। मुनियों व साध्वीयों के उपयोगी उपकरण मिलते हैं।

अब मैंने उपयोगी सामान लिया। टैक्सी से अगले गंतव्य स्थान पालिताना की ओर सपरिवार रवाना हुआ। सारा रास्ता गुजराती संस्कृति की झलक हर कदम पर मिलती है।

## श्री वल्लभीपूर तीर्थ :

अमहदावाद से ५३ किलोमीटर दूरी पर वल्लभीपूर तीर्थ है। जैन श्वेताम्बर परम्परा में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। किसी समय यह वैभवपूर्ण सम्पन्न नगर था। जैन आगमों की अंतिम वाचना से यह सम्पन्न हुई। पहली वाचना आचार्य स्थूलिभद्र की प्रधानगी में पाटलीपूत्र में सम्पन्न हुई। इस से पहले भी एक वाचना का उल्लेख खण्डगिरी के कुमारगिरी पर्वत पर राजा मेघ वाहन खारवेल द्वारा सम्पन्न कराने का वर्णन वीर वि० सं० २०० में पाया जाता है। प्रभु महावीर के बाद जो पूर्व साहित्य की परम्परा थी इस का वर्णन नदी सूत्र में विस्तार से मिलता है। उस समय तक पूर्व परम्परा के १४ पूर्व श्रुतधर आचार्य को याद थे। आर्य स्थूलिभद्र का काल मौर्य काल का है। आचार्य स्थूलिभद्र का परिवार नंद के मन्त्री पद पर आसीन रहा। उस समय पाटली पूत्र साजिशों का केन्द्र बन गया। आचार्य स्थूलिभद उस के बड़े भाई व बहिनों ने दीक्षा ग्रहण की। इस समय पहला १२ वर्ष का अकाल पड़ा। कुछ साधु भद्रबाहु से १४ पूर्वों का ज्ञान सीखने नेपाल गए। पर उन्होंने साधु को यह ज्ञान न दिया। फिर मगध संघ ने आज्ञा दी कि आचार्य स्थूलिभद्र आदि को वाचना दें। आचार्य स्थूलिभद्र नेपाल गए। सभी साधु पूर्वों का अध्ययन

करने गए। १० पूर्वों का ज्ञान अर्थ सहित दिया गया।

एक दिन स्थूलिभद्र की सात बहनें अपने भाई के दर्शन करने आई। साध्वी बनी बहिनों ने आचार्य भद्रबाहु से कहा "गुरुदेव ! हमारा भाई कहां है ?" आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने कहा "गुफा में तुम्हारा भाई ध्यानारथ है।"

बहिनें गुफा की ओर गईं। तो क्या देखती हैं कि एक शेर बैठा है। सभी साध्वी भय के कारण वापिस लौट आईं। सारी बात आचार्य भद्रबाहु को बताई। आचार्य भद्रबाहु ने साध्वीयों से कहा "तुम अब जाओ, तुम्हारा भाई वहीं मिलेगा। वह विद्याबल से शेर बन गया है।"

बहिनें दूसरी बार गईं तो उन्होंने अपने भाई स्थूलिभद्र को पाया। उस दिन भद्रबाहु ने स्थूलिभद्र को पूर्वों का मूल अभ्यास कराया। उन पूर्वों का अर्थ नहीं बताया। आचार्य स्थूलिभद्र ने बहुत प्रार्थन की । पर भद्रबाहु स्वामी ने सोचा कि भविष्य में इस पूर्व विद्या कोई दुर उपयोग कर सकता है। इस लिए मुझे यह ज्ञान भविष्य में किसी को नहीं देना।"

आचार्य स्थूलिभद्र ने पाटलीपुत्र में सभी अंग उपांगों के जानकारी से वाचना की। इस समय १२वीं अंग दृष्टिवाद समाप्त हो चुका था। यह दृष्टिवाद अंग किसी को याद नहीं था।

आगमों की दूसरी वाचना मथुरा में आर्य स्कंदिल की प्रधानगी में सम्पन्न हुई। तब तक साधू आगमों की अधिकांश भाग भूल चुके थे। इस लिए दूसरी वाचना में आगम लिखे गए। इस में पाठ भेद सामने आए। इसे माथुरी वाचना कहा जाता है। उस समय मथुरा जैन कला, संस्कृति धर्म का केन्द्र था।

आगमों की दो वाचनाएं इसी वल्लभी में सम्पन्न

हुई। उसे समय यहां श्री देवर्धिगणि क्षमाश्रमण सहित पांच सौ आचार्य इकट्ठे हुए। लम्बे विमर्श हुए। पिछली माथुरी वाचना को सामने रखा गया। साधू की भूलने की शक्ति को ध्यान में रख कर समस्त आगमों को ताडपत्र लिखने का निर्णय लिया गया। यह क्रान्तिकारी कदम था। श्री संघ ने ताड पत्रों पर ५०० आचार्यों से आगम लिखाने का कार्य शुरू करवाया। यह इतिहासक कदम था जिस के कारण हमें आज समस्त आगम उपलब्ध होते हैं। जब ताड़ पत्र जीर्ण शीर्ण होने लगे तो कागज पर आगम लिखने की परम्परा चली। आज भी हाथ से आगम लिखने की परम्परा तेरापंथ समाज में प्राप्त होती है। अब तो लिपि के सुन्दर नमूने भी आगमों के रूप में प्राप्त होते हैं।

वल्लभी में आगम लिखने का इतिहासक वि. सं. ५११ से शुरू हुआ। इससे पहले तो सारा साहित्य श्रुत परम्परा के रूप में उपलब्ध होता था। वल्लभी नगरी अपनी प्राचीन धरोहर को समेटे हुए है। यहां का जैन मन्दिर भव्य है जहां प्रभु ऋषभदेव की प्रतिमा मूलनायक के रूप में दर्शन होते हैं। प्रतिमा पद्मासन में स्थित है।

इसी मन्दिर के नीचे के भाग में देवर्धिगणि क्षमाश्रमण एवं पांच सौ आचार्यों की प्रतिमाएं कलात्मक ढंग से बनाई गई हैं। सभी आचार्य ताडपत्र पर शास्त्र लिखते प्रदर्शित किए गए हैं। यह मन्दिर इतिहासक मन्दिर हैं। यह तीर्थ सरस्वती उपासकों के लिए पूज्नीय हैं। गुमनाम आचार्यों के प्रति श्रद्धा से झुक गया। सारे भारतवर्ष में शायद ही यह एक मात्र स्थान जहां इतनी प्रतिमाओं के माध्यम से जैन इतिहास को जिंदा रखा है। वह श्री संघ साधुवाद के पात्र हैं जिन्होंने ऐसे चमत्कारी आचार्यों के मन्दिर का निर्माण करवाया। इस मन्दिर को देख कर धर्म के प्रति आस्था जागती है। प्रभु

के प्रति समर्पण का भाव जागता है। साथ में श्वेताम्बर जैन साहित्य को लिपिवद्ध करने वाले आचार्य देवार्धिगणि को वन्दना करने को आत्मा लालायित हो जाती है।

मैंने भी इस इतिहासक वल्लभी तीर्थ की यात्रा की, तो मेरे मन में वह सारे भाव जागृत हुए जो एक लेखक के मन में जागते हैं। आचार्य श्री ने अपनी कलम से प्रभु महावीर के उपदेशों को मूलरूप में सुरक्षित करने की चेष्टा की है।

२

# शत्रुंजय तीर्थ पालिताना

शत्रुंजय तीर्थ जैनों का प्रमुख सिद्ध क्षेत्र है। यह समस्त जैन समाज का तीर्थ है। श्वेताम्बर व दिगम्बर दोनों इसे सिद्ध क्षेत्र मानते हैं। इस तीर्थ पर भगवान ऋषभदेव ९९ बार पधारे थे तब से सभी तीर्थंकरों के समोसरण यहां लगे। करोडों मुनियों व साध्वीयों ने इस क्षेत्र से मोक्ष पधारे। श्री अतंकृतदशांग में भगवान नेमिनाथ के अनेकों मुनियों व साध्वीयां इस पर्वत से मोक्ष गए। इस तीर्थ का इतिहास बहुत प्राचीन है। चाहे इस तीर्थ पर किसी तीर्थंकर का कोई कल्याणक नहीं हुआ पर यहां से करोडों भव्य आत्माओं ने तप कर मोक्ष प्राप्त किया। इस पर्वत का कण कण पवित्र है। इस लिए इसे विमलाचल पर्वत कहते हैं। कर्म रूपी शत्रुओं पर विजय प्राप्त होने के कारण इस का नाम शत्रुंजय पडा। सिद्ध परमात्मा की मोक्ष भूमि होने के कारण इसे सिद्धांचल पर्वत भी कहा जाता है। इस पर्वत का वर्णन ग्रंथ शत्रुंजय महात्मय में मिलता है। इस ग्रंथ के अनुसार इन सब तीर्थों में यह तीर्थ पापनाशक, मुक्तिदायक कहा गया है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मान आदि शत्रुओं पर विजय पाई। अनेकों भव्यात्माओं ने मोक्ष रूपी लक्ष्मी का वरण किया। इसी कारण इस पर्वत की हर चोटी पर जैन मन्दिर स्थापित किया गया है। हर जैन सुबह जब देवदर्शन को जाता है तो यह मंत्र पढ़ता है।

नमस्कारं मंत्र समोः, शत्रुंजय समः गिरिः
वीतरागों समः देवो, वा भूतो न भविंष्यती

अर्थात् - नमस्कार मंत्र से बढ़ कर कोई मंत्र नहीं, शत्रुंजय गिरि से बडा कोई महान तीर्थ नहीं। वीतराग

के समान कोई देवता नहीं। यह बातें न भूत काल में थी न वर्तमान में है, न भविष्य काल में होगा। फिर भक्त कहता है :

सिद्धांचल सुमरूं सदा, सोरष्ट देश मजार
मनुष्य जन्म पावुं सदा, वदुं वार हजार।

यहां मूल नायक आदिश्वर दादा की पूजा अर्चना वन्दना करना हर जैन अपने जीवन का सौभाग्य समझता है। इस तीर्थ का वातावरण अध्यात्मिकता से भरा पड़ा है। भक्त उपर वाले स्तवन में कहता है "मैं सिद्धांचल तीर्थ को नमस्कार करता हूं जो सोराष्ट्र में स्थित है। मनुष्य जन्म पाकर मैं हजारों वार वन्दना करता हूं।

## तीर्थ दर्शन :

शत्रुंजय तीर्थ की उंचाई तलहटी से २०० फुट है। इस तीर्थ पर ६८१३ से ज्यादा कलात्मक व इतिहासक जिनालय हैं। इस तीर्थ का प्रथम जीर्णोद्धार भगवान ऋषभदेव के पुत्र चक्रवर्ती भरत ने कराया था। इस तीर्थ के २१ से ज्यादा जीर्णोद्धार का इतिहास प्राप्त होता है। पालीताना को मन्दिरों का शहर माना जाता है। विश्व इतिहास में कला व श्रद्धा की दृष्टि से यहां सब अनुपम, सुन्दर है। सारे संसार से तीर्थ यात्री आदिश्वर दादा के दर्शन करने आते हैं। जैन धर्म में समेद शिखर के बाद इस तीर्थ का स्थान है। सारे तीर्थ में भव्य धर्मशालएं हैं। हजारों साधू, साध्वी यहां यात्रा करने आते हैं। धर्मशाला में भी मन्दिर हैं। पालीताना स्टेशन के पास जम्बूदीप आदि प्रसिद्ध मन्दिर त्रिलोक रचना का सुन्दर नक्शा प्रस्तुत करते हैं। कार के रास्ते भावनगर से ५५ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। अहमदाबाद से पालीताना २५५ किलोमीटर की दूरी पर है। तलहटी से